National Journal of
Hindi & Sanskrit Research

**ISSN: 2454-9177**
NJHSR 2019; 1(23): 89-92
© 2019 NJHSR
www.sanskritarticle.com

**बलराम आर्य**
शोधच्छात्र,संस्कृत विभाग,
जामिया मिल्लिया इस्लामिया,दिल्ली

**Correspondence:**
**बलराम आर्य**
शोधच्छात्र,संस्कृत विभाग,
जामिया मिल्लिया इस्लामिया,दिल्ली

# धर्मशास्त्र में अपराध एवं दण्ड का स्वरूप

**बलराम आर्य**

समाज की परम्परा, रीति तथा संस्कृति के विरुद्ध होने वाले कार्य को सामाजिक व्यवस्था में अपराध माना जाता है और कोई समाज इस अपराध को अधिक दिन सहन नहीं कर सकता है, अतः सामाजिक व्यवस्था में ऐसे अपराधों के लिये प्रारम्भ काल से ही दण्ड-विधान की व्यवस्था रहीं है। दण्ड विधान के अनेक उद्देश्य रहे होंगे परन्तु मुख्य भावना "पुनः अपराध की भावना न हो" यही रही होगी। मनु ने 'पातक' शब्द से अपराध को सम्बोधित किया है तथा मनु की व्यवस्था में पातक को दो भागों में विभाजित किया है- उपपातक तथा महापातक।

मानव की मानसिकता अनन्त विविधता से ओत प्रोत है। यहाँ प्रत्येक मनुष्य का बुद्धिस्थ होने से अपना स्वयं का चिन्तन होता है तथा उसी आधार पर उसकी मानसिकता का निर्माण होता है अतः अब समस्या यह आती है कि कोई उसी कर्म को अपराध मानता है परन्तु कुछ लोग उसे स्वभाव (नेचुरल कॉल) कहते है। ऐसे में अपराध का निर्धारण करना तथा उस पर दण्ड का विधान इन दोनों का क्या मानदण्ड, क्या सीमा हो यह भी निर्धारण करना मुश्किल है। समाज अपने प्रागवस्था से इन समस्याओं का सामना करता आ रहा है। इसी कारण भारत में धर्मशास्त्रीय परम्परा का प्रारम्भ हुआ। भारत की विविधता को ध्यान में रखते हुये कह सकते है कि भारत में विविध धर्मशास्त्रीय ग्रन्थ रहे होंगे जो अपने देश-काल में समाज की व्यवस्था को चलाने में राजा की सहायता करते होंगे। स्मृतियों की विविधता को देखने के बाद ही मनु ने सभी स्मृतियों से मनुस्मृति को महत्त्वपूर्ण माना है।

अपराध को समझने के लिये हमें देखना होगा कि अपराध का पाप अथवा पातक से क्या सम्बन्ध था? काणे महोदय पाप या पातक को परिभाषित करते हुये कहते है कि "पाप या पातक ऐसा शब्द है जिसका आचार शास्त्र की अपेक्षा धर्म से अधिक सम्बन्ध हैं।"[1] समाज में पारम्परिक रूप से गम्भीर अपराध जैसे हत्या , चोरी, डकैती तथा बलात्कार इत्यादि तो सदैव ही पाप या अनैतिकता से सम्बन्धित रहते हैं। जब कोई व्यक्ति जानबूझ कर स्वेच्छापूर्वक अपराधिक आचरण करता है तो वह नैतिक रूप से उसका उत्तरदायी रहता है। भारतीय सामाजिक परम्परा में दण्ड शब्द का प्रयोग अनेक अर्थों में हुआ है ऋग्वेदीय मन्त्र में आये हुये दण्ड शब्द का भाष्य लिखते हुये सायण ने उसकी व्युत्पत्ति "दमः दमनम्" इस प्रकार की है।[2] यास्क ने भी दण्ड शब्द की उत्पत्ति "दम" धातु से मानी है।[3] गौतम धर्मसूत्र में दमन करने के कारण ही दण्डविधि को दण्ड कहा गया जिसके द्वारा निरंकुश लोगों को वश में किया जाता है।[4] याज्ञवल्क्य ने भी माना है कि दण्ड से मनुष्य अपने कर्त्तव्य का पालन करते हुए धर्म का अनुसरण करता है।[5] मनु ने इस दण्ड की विशेषता को बताते हुये इसे ईश्वरीय धर्मपुत्र बताया है[6] उनके अनुसार दण्ड ही प्रजाशासन चलाता है। दण्ड ही रक्षा करता है, दण्ड ही सभी के सोने पर जागता है, इसीलिये विद्वान लोग दण्ड को ही धर्म कहते है।[7] याज्ञवल्क्य के अनुसार न्यायपूर्वक प्रजा का पालन होने पर राजा प्रजाओं के पुण्य का छठा भाग प्राप्त करता है।[8] धर्मशात्रीय ग्रन्थों में आर्थिक अपराध, वाक्पारुष्य, दण्डपारुष्य, सम्पत्ति अपहरण, शारीरिक अपराध, मद्यपान, चोरी, हत्या ऐसे अनेक अपराधों के लिये अलग-अलग दण्ड की व्यवस्था की जाती थी। इस दण्ड व्यवस्था में जाति, वंश, वर्ग आदि का महत्त्व था। स्मृति ग्रन्थों में मुख्य रूप से दण्ड के चार प्रकार बताये हैं- (१) धिग्दण्ड (२) वाक्दण्ड (३) अर्थदण्ड एवं (४) वध दण्ड। इन चारों दण्डों के क्रम का अलग-अलग महत्त्व है। समाज में किसी अपराध के दण्ड हेतु पहले उसे धिग्दण्ड दिया जाता है इसके उपरान्त उसे

वाक्दण्ड, अर्थदण्ड दिया जाता है। तथा अन्तिम में उसे वधदण्ड दिया जाता था। इस प्रकार विभाजन के अतिरिक्त भी इन दण्डों का क्रम रहा है जैसे सभ्य लोगों के लिये धिग्दण्ड एवं वाक्दण्ड ही पर्याप्त होते रहें है।

धर्मशास्त्र तथा अर्थशास्त्र के अध्ययन से यह परिलक्षित होता है कि इन विचारकों ने अपराधों को गम्भीरता पूर्वक लेते हुये उन पर नियन्त्रण हेतु दण्डविधान किया है। अतः कतिपय विद्वानों का कथन जो इस प्रकार है कि "भारतीय प्राचीन सभ्यता में अधिकार तथा न्याय व्यवस्था का स्थान नहीं था" का भी खण्डन करता है। भारत केवल धर्म तथा दर्शन जैसे विषयों में ही अग्रसर नहीं था बल्कि राजशास्त्र, न्यायव्यवस्था आदि विषयों का भी यहाँ विस्तृत चिन्तन किया गया है। भारतीय धर्मशास्त्र केवल दण्ड का विधान नहीं करते बल्कि न्यायोचित दण्ड व्यवस्था का विधान करते है उनके अनुसार अपराध के परिमाण, अंश और मात्रा पर भी ध्यान देते हुए अपराध के मूल कारण को जानना आवश्यक है क्योंकि दण्ड व्यवस्था का उद्देश्य पुनः अपराध को रोकना है। मनु ने अपने ग्रन्थ में माना है कि राजा देश, काल, दण्डशक्ति और विधा का ठीक-ठाक विचार करके ही अपराधियों को उचित दण्ड दें।[9] याज्ञवल्क्यस्मृति में भी अपराध, देश, समय, शक्ति, आयु, कार्य तथा धन का पता लगाकर ही दण्डनीय व्यक्तियों को दण्ड देने का निर्देश देते है।[10] मानव स्वभाव के अनुसार मानव में प्रतिशोध की भावना का आधिक्य रहता है किसी व्यक्ति के अपराध करने पर जो अपराधग्रस्त हुआ वह भी अपराध के बदले अपराध करने का सोचता है यदि इसी प्रकार सभी अपराध में लीन हो गये तो समाज की व्यवस्था भंग हो जायेगी अतः समाज में सुव्यवस्था हेतु दण्ड विधान आवश्यक था।

सामजिक परिदृश्य से यह ज्ञात है कि अपराध का कोई एक स्वरूप नहीं होता है अतः यह भी निश्चित है कि जिस प्रकार का अपराध है उसी प्रकार का उसका दण्ड भी होता है। प्रत्येक धर्मशात्रीय ग्रन्थों में दण्ड का विधान भिन्न –भिन्न किया गया है परन्तु यह अवश्य देखने को मिलेगा की उनके विवेचन में नियम एक-दूसरे पर प्रभावी है। धर्मशास्त्र की परम्परा आज हमारे सामने स्मृति ग्रन्थों में मनुस्मृति जो सर्वप्रचीन मानी जाती है तथा याज्ञवल्क्य स्मृति जो उन्नत समाजिक व्यवस्था हेतु प्रतीत होती है, ये दो ग्रन्थ सर्वप्रचलित है तथा इनके साथ ही कौटिल्य का अर्थशास्त्र भी सामजिक व्यवस्था के नियन्त्रण का सर्वमान्य ग्रन्थ है इस ग्रन्थ में कौटिल्य ने अपने ८० मतों को प्रस्तुत करते हुये अनेक आचार्यों के मतों का विस्तृत विवेचन किया है। इस शोध पत्र में हम इन्हीं ग्रन्थों को मुख्यतः लेकर यहाँ धर्मशास्त्रीय दण्डव्यवस्था के उदाहरण के माध्यम से तत्कालीन समाज की दण्ड व्यवस्था किस प्रकार की रही होगी इस बात पर चिन्तन करेंगे। धर्मशास्त्रीय ग्रन्थों में दण्ड के निम्न प्रकारों को देखने पर हम दण्ड को चार प्रकार से देख सकते है। प्रथम आर्थिक दण्ड अर्थात् इस दण्ड के अनुसार अपराधी को अर्थ रूप में दण्ड दिया जाता है। द्वितीय दण्ड शारीरिक दण्ड अर्थात् वह दण्ड जिसमें अपराधी के शरीर से सम्बन्धित दण्ड दिया जाता है। तृतीय वह दण्ड जिसमें राज्य से निष्कासन कर दिया जाता है तथा अन्तिम कोटी में दण्ड के रूप में मृत्यु दण्ड दिया जाता है।

आर्थिक दण्ड- धर्मशास्त्रीय ग्रन्थों में आर्थिक दण्ड को सबसे ज्यादा महत्त्वपूर्ण माना है इसमें किसी को शारीरिक कष्ट जैसी समस्या नहीं आती है। भारतीय राजव्यवस्था में राजा क्षत्रिय होता था वही सम्पूर्ण प्रजा हेतु न्याय-व्यवस्था करता था परन्तु समस्या यह थी कि तत्कालीन समाज में ब्राह्मण वर्ग जो क्षत्रिय वर्ग से श्रेष्ठ माना जाता था। अतः ऐसा अपराधी जो ब्राह्मण हो उनको शारीरिक दण्ड के स्थान पर आर्थिक दण्ड देना ज्यादा सरल होता था। आर्थिक दण्ड का स्वरूप ग्रन्थों में भिन्न रूप से देखने को मिलता है जहाँ मनुस्मृति में २५० पणों को प्रथम साहस, ५०० पणों का मध्यम साहस तथा १००० पणों का उत्तमसाहस होता है वही याज्ञवल्क्य स्मृति में प्रथम साहस २७० पण, मध्यम साहस ५४० पण तथा उत्तम साहस १०८० पण का निर्धारित रहा है। आर्थिक दण्ड के उदाहरण को देखे तो मनु का मत है कि यदि फसल नष्ट करने सम्बन्धी कोई मुकदमा हो तो उसमें आर्थिक दण्ड दिया जाता है यदि स्वयं किसान के पशु द्वारा फसल नष्ट हुई तो किसान पर राजदेयभाग का १० गुना दण्ड दिया जाता था इसी प्रकार यदि असमय फसल से कोई हानि हुई तब भी उसका दण्ड किसान को देना होगा। चरवाहा की गलती से यदि उसकी फसल नष्ट होती है तो उस पर १०० पण का दण्ड हो। मनु कहते है कि ,यदि वाहक की गलती से किसी यात्री की मृत्यु हो जाये तो सारथी पर २०० पण का दण्ड दिया जाता है यदि सारथी मूर्ख है तो उसके स्वामी पर २०० पण का दण्ड दिया जाता था इतना ही नहीं यदि मूर्ख सारथी के वाहन पर कोई यात्रा करता है तो ऐसे यात्री पर भी १००-११० पण का दण्ड दिया जाता था।[11] इसी प्रकार झूठी गवाही देने पर मनु ने ५०० पण का दण्ड निर्धारित किया है।[12] लेकिन याज्ञवल्क्य ने इसके लिये ५४० पण निर्धारित किया है।[13] मनु के अनुसार चोरी करने वाले शूद्र पर आठ गुणा, वैश्य पर सोलह गुना, क्षत्रिय पर बत्तीस गुणा तथा ब्राह्मण पर ६४ गुणा या १०० गुणा या १२८ गुणा दण्ड होता है[14] गौतम[15] तथा नारद[16] ने भी इसका समर्थन किया है। मनु ने इसी प्रकार मादक पदार्थों, वस्त्र, धातु,फसल आदि चुराने के लिये अलग आर्थिक दण्ड का विधान किया है। व्यभिचार जैसे अपराध हेतु भी आर्थिक दण्ड का विधान किया गया है इस दण्ड व्यवस्था में वर्ण के अनुसार दण्ड की व्यवस्था थी। वाक्पारुष्य अपराध में भी वर्ण के अनुसार दण्ड दिया जाता रहा है यथा यदि कोई ब्राह्मण क्षत्रिय को कटुवचन कहे तो ५० पण, वैश्य को कहे तो २५ पण तथा शूद्र को कहता है तो १२ पण दण्ड देना होगा।[17] मनु ने समान वर्ण वालों को आपस में कटुवचन बोलने पर १२ पण तथा यह विवाद उग्ररूप में हो तो २४ पण का दण्ड का निर्धारण है।[18] इसी प्रकार अपहरण, हत्या आदि अनेक अपराधों हेतु धर्मशास्त्रीय ग्रन्थों मे आर्थिक दण्ड का निर्धारण किया है।

दण्ड की व्यवस्था का दूसरे प्रकार का दण्ड शारीरिक दण्ड है। शारीरिक दण्ड के भी अनेक प्रकार रहे है इसमें ताडन, अङ्गच्छेदन, तप, परिश्रम आदि अनेक प्रकार है। प्रधानतः इस दण्ड का निर्देश चोरी, व्यभिचार तथा शूद्र के अपराधों हेतु निर्धारित किया था। मनु ने व्यभिचार करने पर अङ्गच्छेदन का दण्ड का निर्धारण करते हुये इसका विस्तृत वर्णन किया है इसमें

भिन्न-भिन्न स्थिति में भिन्न-भिन्न अङ्गच्छेदन का दण्ड निर्धारित किया है। चोरी के अपराध पर मनु कहते है कि अपराधी द्वारा जिस अङ्ग से चोरी की गई है उसी अङ्ग को काट देना चाहिये।[19] मनु ने चोरी के प्रकार के अनेक दण्ड का निर्धारण किया है। धर्मशास्त्रों के अनुशीलन से ज्ञात होता है कि दण्ड स्वरूप बन्धन की व्यवस्था भी थी। कारागार दण्ड भी शारीरिक दण्ड के अन्तर्गत आता है। मनु का कथन है कि जो अधार्मिक हो अर्थात् चोर आदि हों तो उन्हें दण्ड देने का एक प्रकार बन्धन (कारावास) है। धर्मशास्त्रों मे कारावास के अनेक प्रकार थे यथा सावधि कारागार, आजीवन कारावास एवं निस्संग (एकाकी) कारावास।

दण्ड के प्रकारों में राज्य निष्कासन भी एक महत्त्वपूर्ण दण्ड रहा है जिसमें मुण्डन, अंकन, छेदन करके अपराधी को राज्य से निष्कासित किया जाता था। स्मृतियों में ब्राह्मण के द्वारा कोई अपराध करने पर उसे राज्य से निष्कासित करने का दण्ड बताया है क्योंकि ब्राह्मण को शारीरिक दण्ड देना का प्रावधान भारतीय धर्मशास्त्रीय परम्परा में नहीं है।[20] याज्ञवल्क्य ने भी इस पर विचार करते हुये कहा है कि जो ब्राह्मण चोरी आदि अपराध से ग्रस्त हो उसके ललाट पर चिह्न लगाकर उसे राज्य से निष्कासित किया जाता है।[21] स्मृतिकारों ने उन अपराधों के लिए भी दण्ड का प्रावधान किया है जिनके होने से समाज पर दुष्प्रभाव हो, जैसे मद्यपान, अक्ष, चोरी आदि।

मृत्युदण्ड धर्मशास्त्र का अन्तिम दण्ड है। मृत्यु दण्ड की व्यवस्था सामान्यतः अपराध की गम्भीरता पर निर्भर करती है। मृत्यु दण्ड के विषय में लिखते हुये मनु इसे दो भागों में विभाजित करते है प्रथम चित्रवध तथा द्वितीय शुद्धवध। चित्रवध वह दण्ड है जिसमें अपराधी को शारीरिक कष्ट देकर मृत्यु प्रदान करना तथा शुद्धवध में बिना किसी उत्पीडन के मृत्यु प्रदान करना। मृत्यु दण्ड के विधान करते हुये मनु कहते है कि कोई यदि ब्राह्मण का वध कर दे तो उसे मृत्यु दण्ड देना चाहिये।[22] इसी प्रकार मनु ने व्यभिचार के लिये मृत्यु दण्ड[23] , चोरी के लिये मृत्यु दण्ड।[24] भारतीय परम्परा में शूद्र को निम्न कोटी का माना जाता रहा है अतः उसके द्वारा अपराध करने की स्थिति में अधिकांश मृत्यु दण्ड ही दिया जाता रहा है। इस प्रकार दण्ड प्रक्रिया में अन्तिम दण्ड मृत्यु दण्ड था।

**स्त्रियों के प्रति अपराध व दण्डव्यवस्था**

वर्तमानकालिक समाज के सर्वाधिक चिन्तन का विषय स्त्री-सुरक्षा व उनका सशक्तिकरण है। स्त्रियों के प्रति जो घृणित अपराध समाज में देखे जा रहे हैं यह आधुनिक विषय नहीं बल्कि इसकी परम्परा भी सृष्टि के आदि काल से ही है क्योंकि पुरुष प्रधान सत्ता होने से स्त्रियों को पुरुषों से कमजोर समझना हमारे समाज की भूल रही है अतः इसी कारण स्त्री-अपराध होने की ज्यादा सम्भावना रही है। अगर इसी बात को दूसरे प्रकार से देखे तो किसी भी राष्ट्र का प्रथम कर्त्तव्य होता है कि स्त्रियों की सुरक्षा। आक्रमण काल में भी राजा पराजित राष्ट्र की स्त्रियों पर अत्याचार करते थे जिसका उद्देश्य अपनी शक्ति का प्रदर्शन रहता था। समाज में स्त्री हमेशा से आदर्श रही है जिसकी सुरक्षा हेतु पर्दाप्रथा, बालविवाह इत्यादि परम्परा प्रारम्भ की गई थी। स्मृतिकाल में भी स्त्रियों पर अत्याचार का स्वरूप अवश्य था अतः स्मृतिग्रन्थों में उनके आरोपी पर कठोर दण्डव्यवस्था थी। उस समय कन्या/ स्त्री से यदि कोई हिंसा, बलात्कार अथवा वाक्पारुष्यादि सम्बन्धित कृत्य करता था, वह दण्डनीय था।

**१.गार्भपातिक अपराध-**

अर्थशास्त्रानुसार यदि कोई व्यक्ति प्रहार द्वारा गर्भ गिराये तो उसे उत्तम साहस, औषध द्वारा गिराये तो मध्यम साहस तथा कठोर कार्य कराकर गर्भ गिरावे तो प्रथम साहस का दण्ड देवे।[25] इसी प्रकार याज्ञवल्क्य स्मृति में कहा है यदि कोई किसी स्त्री पर शस्त्र चलाये या गर्भपात करे तो वह उत्तम साहस के दण्ड का भागी होता है तथा यदि वह स्त्री को मार डाले, तो भी उस पर उत्तम साहस का दण्ड लगाया जाता है।[26]

**२.बलात्शारीरिक अपराध –**

यदि कोई व्यक्ति, बलात् किसी स्त्री का शीलभङ्ग करता है, स्त्री/पुरुष की हत्या करता है, स्त्री-हरण करता है, स्त्री को नाक-कान आदि काटकर कुरूप करता है (वर्तमान का तेजाबी-हमला), उसकी धमकी देकर हत्या कर देता है तो ऐसे अपराधी को सूली से लटका देना चाहिये।[27] किसी कन्या का बलादपहरण करने बाले पुरुष पर २००पण का दण्ड दिया जावे, यदि सामूहिक अपहरण हो तो प्रत्येक पर पृथक्-पृथक् दण्ड देवे।[28] कन्या को दूषित करने में भी यदि कोई सहायता करे, मौका या जगह दे तो उस पर भी अपराधी के बराबर दण्ड देवे।[29] यदि स्त्रियों से बलात्कार सम्बन्धित कोई घटना हुई है, तो मिताक्षरा में वध तक के दण्ड की व्यवस्था है। यद्यपि तत्कालीन व्यवस्था वर्णाधारित थी, अतएव धनदण्ड तथा वध-दण्ड दोनों प्रकार के दण्डों का विधान है।[30] तत्काल में चारों वर्णों की किसी भी स्त्री के साथ बलात्कार होने पर आरोपी पर १०८० पणों का दण्ड होता था।

**३.वाक्पारुष्य-**

यदि किसी व्यक्ति (स्त्री/पुरुष) की कोढी, पागल या नपुंसक कहकर निन्दा करे अथवा स्त्री से अश्लील गाली-गलौज करे, तो १२ पण का दण्ड होवे।[31] यदि कोई किसी व्यक्ति को माँ-बहन की अश्लील गाली-गलौज का प्रयोग करे तो उसे राजा २५ पण का दण्ड देवे। यदि ऐसा असवर्णी, हीन स्त्री पर करे तो आधा दण्ड लगावे और यदि ऐसा व्यवहार कुलीन परस्त्री पर हो तो दुगना दण्ड देवे।[32]

**४.दण्डपारुष्य-**

नाभि के निचले हिस्से पर हाथ, कीचड, राख या धूल डालने वाले को ३पण का दण्ड हो। यदि शिर पर किया जाये तो चौगुना, यदि परस्त्री हो तो दुगना दण्ड देवे।[33] कोई व्यक्ति पैर, वस्त्र, हाथ व केशादि को पकडकर स्त्री को खींचे तो क्रमशः ६, १२, १८, २४ पण का दण्ड लगावे।[34]

**५.दोषों को छिपाकर धोखे से विवाह करना-**

यदि कोई वर अपने दोषों को छुपाकर गलत सूचना देकर स्त्री से

विवाह कर ले, तो यह अपराध होगा। अतएव उस पर १९२पण दण्ड किया जाये तथा उसको दिया हुआ शुल्क व स्त्रीधन भी जब्त किया जावे।[35] प्राचीन समय में कन्या के अपहरण का अपराध भी सामने आता था, अतएव उसका वर्णन भी किया गया है।[36] विवाह के लिये अलङ्कृत सवर्णा कन्या का अपहरण करने वाले को उत्तम साहस का दण्ड देना चाहिये। यदि कन्या का तत्काल में विवाह न हो रहा हो तो अधम साहस का दण्ड देवे। यदि अपहरण कुलीन कन्या का किया गया हो तो वध दण्ड दिया जाये। मिताक्षराकार वर्णन करते हैं कि स्त्री पति का वही ऋण दे, जो कि उसने स्वयं अथवा पति के साथ लिया, अन्य ऋण न दे। साथ ही यदि पति व्यसनी हो, तब न दें । यदि वह ऋणदानहेतु घरेलू हिंसा करें, तो वह न्यायालय जा सकती है।[37]

अतः भारतीय धर्मशास्त्रीय व्यवस्था में दण्डव्यवस्था का उन्नत रूप था जो एक सुदृढ़ राष्ट्र की प्रतिमा को स्थापित करती है। भारत में वेदों में भी दण्ड का प्रावधान था जिसका उद्देश्य अपराध को रोकना था। वेदों को धर्मशास्त्र विद्या के ग्रन्थ नहीं कह सकते है क्योंकि वेद में समग्र विद्याओं का उपदेश है तथा धर्मशास्त्र भी उसकी एक विद्या है। प्राचीनतम धर्मशास्त्र साहित्य में धर्मसूत्र आते है जिनमें गौतम धर्मसूत्र प्रसिद्ध है। इसके बाद स्मृति ग्रन्थों में मनुस्मृति तथा याज्ञवल्क्यस्मृति प्रसिद्ध है तथा कौटिल्य का अर्थशास्त्र भी धर्मशास्त्रीय विद्या का उपदेश विस्तृत रूप से देते है। इन धर्मशास्त्रीय साहित्य में भारतीय दण्डव्यवस्था का वर्णन है जिसमें अपराध के भेद के अनुसार दण्ड की व्यवस्था का उल्लेख है। आधुनिक भारतीय दण्डसंहिता भी इससे अछूती नहीं है क्योंकि उसके निर्माण के समय इन शास्त्रों का अध्ययन अपेक्षित रहा है। अतः यह स्पष्ट है कि भारतीय दण्डव्यवस्था समृद्ध तथा न्यायकारी थी।

**सन्दर्भ ग्रन्थ :-**


1.पी. वी. काणे, धर्मशास्त्र का इतिहास, भाग- पृष्ट १०५

2.ऋग्वेद ६/४७/१६ सायण भाष्य

3.दण्डो ददतेधरियतिकर्मणः। दमनादित्यौपमन्यवः। निरुक्तम् पृष्ठ ६८

4.दण्डो दमनदित्याहुस्तेनादान्तान्दमयेत्। गौतमधर्मसूत्र २/२/२८

5.याज्ञवल्क्य १/३५४

6. तस्यार्थे सर्वभूतानां गोप्तारं धर्ममात्मनम्।
ब्रह्मतेजोमयं दण्डमसृजत्यपूर्वमीश्वरः॥ मनुस्मृति ७/१४

7.दण्डः शास्ति प्रजाः सर्वादण्ड एवाभिरक्षति।
दण्डः सुप्तेषु जागर्ति दण्डं धर्म विदुर्बुधाः॥ मनुस्मृति १/१८

8.इतरेण निधो लब्धे राजा षष्ठांशभाहरेत्।
अनिवेदित विज्ञातो दाप्यस्तं दण्डमेव च॥ याज्ञवल्क्यस्मृति १/३५

9.मनुस्मृति ७/१६

10.ज्ञात्वाऽपराधं देशं च कालं बलमथापि वा।
वयः कर्म च वित्तं च दण्ड्येषु पातयेत्॥याज्ञवल्क्यस्मृति

11.यत्रापवर्तते युग्यं वैगुण्यात्प्राजकस्य तु ।
तत्र स्वामी भवेद्दण्ड्यो हिंसायां द्विशतं दमम् ॥मनुस्मृति ८.२९३॥
प्राजकश्चेद्भवेदाप्तः प्राजको दण्डमर्हति ।
युग्यस्थाः प्राजकेऽनाप्ते सर्वे दण्ड्याः शतं शतम् ॥मनुस्मृति८.२९४॥

12.सामन्ताश्चेन्मृषा ब्रूयुः सेतौ विवादतां नृणाम् ।
सर्वे पृथक्पृथग्दण्ड्या राज्ञा मध्यमसाहसम् ॥ मनुस्मृति ८.२६३॥

13.याज्ञवल्क्यस्मृति २/१५३

14.ब्राह्मणस्य चतुःषष्टिः पूर्णं वापि शतं भवेत् ।
द्विगुणा वा चतुःषष्टिस्तद्दोषगुणविद्धि सः ॥ मनुस्मृति ८.३३८ ॥
वानस्पत्यं मूलफलं दार्वग्न्यर्थं तथैव च ।
तृणं च गोभ्यो ग्रासार्थमस्तेयं मनुरब्रवीत् ॥ मनुस्मृति ८.३३९ ॥

15.गौतमधर्मसूत्र, २/३/१२-१३

16.नारदस्मृति, २१/५१-५२

17.शतं ब्राह्मणमाक्रुश्य क्षत्रियो दण्डमर्हति ।
वैश्योऽप्यर्धशतं द्वे वा शूद्रस्तु वधमर्हति ॥ मनुस्मृति ८.२६७ ॥
पञ्चाशद्ब्राह्मणो दण्ड्यः क्षत्रियस्याभिशंसने ।
वैश्ये स्यादर्धपञ्चाशच्छूद्रे द्वादशको दमः ॥ मनुस्मृति ८.२६८ ॥

18. समवर्णे द्विजातीनां द्वादशैव व्यतिक्रमे ।
वादेष्ववचनीयेषु तदेव द्विगुणं भवेत् ॥ मनुस्मृति ८.२६९ ॥

19.येन येन यथाङ्गेन स्तेनो नृषु विचेष्टते ।
तत्तदेव हरेत्तस्य प्रत्यादेशाय पार्थिवः ॥ मनुस्मृति ८.३३४ ॥

20.दश स्थानानि दण्डस्य मनुः स्वयंभुवोऽब्रवीत् ।
त्रिषु वर्णेषु यानि स्युरक्षतो ब्राह्मणो व्रजेत् ॥ मनुस्मृति ८.१२४ ॥

21.पृथक्पृथग्दण्डनीयाः कूटकृत्साक्षिणस्तथा ।
विवादाद्विगुणं दण्डं विवास्यो ब्राह्मणः स्मृतः ॥ मनुस्मृति २.८१ ॥

22. कूटशासनकर्तॄंश्च प्रकृतीनां च दूषकान् ।
स्त्रीबालब्राह्मणघ्नांश्च हन्याद्विट्सेविनस्तथा ॥ मनुस्मृति ९.२३२ ॥

23. अब्राह्मणः संग्रहणे प्राणान्तं दण्डमर्हति ।
चतुर्णामपि वर्णानां दारा रक्ष्यतमाः सदा ॥ मनुस्मृति ८.३५९ ॥

24.न होढेन विना चौरं घातयेद्धार्मिको नृपः ।
सहोढं सोपकरणं घातयेदविचारयन् ॥ मनुस्मृति ९.२७० ॥

25."प्रहारेण गर्भं पातयत उत्तमो दण्डः। भैषज्येन मध्यमः।
परिक्लेशेन पूर्वः साहसदण्डः। (अर्थशास्त्र ४.८६.११)

26. शस्त्रावपाते गर्भस्य पातने चोत्तमो दमः ।
उत्तमो वाधमो वापि पुरुष-स्त्री प्रमापणे ॥ मिताक्षरा २.२७७

27.प्रसभंस्त्रीपुरुषघातकाभिसारकनिग्रहकावघोषकावस्कन्दकोपवेधकान् पथिवेश्मप्रतिरोधकान् वा शूलानारोहयेयुः। अर्थशास्त्र,४.८६.११

28.प्रसह्य कन्यामपहरतो द्विशतः।
बहूनां कन्यापहारिणां पृथग्पृथग्यथोक्ताः दण्डः। अर्थशास्त्र

29.साचिस्यावकाशदाने कर्तृसमोदण्डः।" अर्थशास्त्र

30.सजातावुत्तमो दण्ड आनुलोम्ये तु मध्यमः।
प्रातिलोम्ये वधः पुंसो नार्या कर्णादिकर्तनम् ॥"(मिताक्षरा २.२८६)

31.कुण्ठोन्मादक्लैव्यादिभिः कुत्सायां च सत्यमिथ्यास्तुतिनिन्दासु
द्वादश पणोत्तरा दण्डास्तुल्येषु। परस्त्रीषु द्विगुणः।"
(अर्थशास्त्र ३.७५.१८)

32.अभिगन्तास्मि भगिनीं मातरं वा तवेति ह। शपन्तं दापयेद्राजा
पञ्चविंशतिकं दमम् ॥ अर्धोऽधमेषु द्विगुणः परस्त्रीषूत्तमेषु च ॥"
(मिताक्षर २.२०५-६)

33."नाभेरधः कायं हस्तपंकमस्मपांशुभिरिति स्पृशतस्त्रिपणो दण्डः।
शिरसि चतुर्गुणाः समेषु। परस्त्रीषु द्विगुणाः।" अर्तशास्त्र ३.९६.१९

34.पादवस्त्रहस्तकेशावलम्बनेषु षट्पणोत्तरा दण्डः।"
(अर्थशास्त्र३.९६.१९)

35.वरयितुर्वा वरदोषमनाख्याय विन्दतो द्विगुणः।शुल्कस्त्रीधननाशश्च।"
(अर्थशास्त्र ३.६९.१३)

36.अलङ्कृतां हरन्कन्यामुत्तमं ह्यन्यथाधमम् ।
दण्डं दद्यात्सवर्णासु प्रातिलोम्ये वधः स्मृतः॥"(मिताक्षरा २.२८७)

37.प्रतिपन्नं स्त्रिया देवं पत्या व सह यत्कृतम् ।
स्वयंकृतं वा यदृणं नान्यत्स्त्री दातुमर्हति॥ (मिताक्षरा २.४९)